5

सृजन के मधुर गीत गाता एक विद्यालय

प्रमोद दीक्षित 'मलय'*

प्रस्तुत आलेख एक मृतप्राय सरकारी विद्यालय के पुनर्जीवन की कथा है, जिसमें विद्यालय की सफलता और उपलब्धियों के मनमोहक प्रेरक चित्र हैं, खुशी से झूमते बच्चों के कलरव का मधुर स्वर है, प्रबंध समिति के सदस्यों, अभिभावकों एवं समस्त ग्रामवासियों का विद्यालय के प्रति अपनेपन के भाव का प्रकटन है। यह एक शिक्षक की जीवंतता और लक्ष्य प्राप्ति के लिए किए गए अथक प्रयास का विनम्र फलक है। जिसमें उसकी खुली आँखों से देखे गए सपनों के स्वर्णिम सितारे टंके हुए हैं। साथ ही यह विद्यालय और समुदाय के संबंधों और परस्पर अवलंबन की नवीन व्याख्या है, जिससे यह संदेश पोषित हुआ है कि प्रत्येक विद्यालय समाज का अभिन्न अंग है और समाज की बेहतरी के लिए विद्यालय की सुरक्षा ज़रूरी होती है। वास्तव में यह लेख सरकारी स्कूलों के प्रति जन सामान्य के मन मस्तिष्क में उभरे इस पूर्वाग्रह और धारणा का तोड़ भी है कि सरकारी स्कूलों में पढ़ाई नहीं होती और यहाँ पढ़ने वाले बच्चों का भविष्य अंधकारमय होता है। यह लेख विद्यालय के प्रति समुदाय में न केवल खोए विश्वास की पुनर्बहाली करता है, बल्कि शिक्षक-अभिभावक संबंधों को संस्कृति वैभव एवं गरिमा प्रदान करता है।

जब हृदय में होता है अपने कर्तव्य के प्रति निष्ठा एवं दायित्व बोध, कदमों में होती है अनंत आसमान को नापने की शक्ति एवं सामर्थ्य, नेत्रों में होती है नवल सृजन की अग्नि, मस्तिष्क में स्पष्ट कार्य योजना और लक्ष्य प्राप्ति का स्पष्ट चित्र तो राह के काँटे भी सुमन बन उसका चरण वंदन करते हैं, सागर भी प्रणाम निवेदित कर स्वयं राह देने की विनय करता है और उसके सम्मान में झुक जाते हैं पर्वतों के उन्नत ललाट और जग अभिनंदन करते हुए कर्मवीर की उपाधि से करता है अलंकृत और यदि कोई कर्मवीर शासकीय शिक्षा क्षेत्र में अपने नवाचारी प्रयासों से अलख जगा रहा हो तो वह वास्तव में सरकारी स्कूलों के प्रति बनी उस जनछवि को तोड़ रहा होता है, जिसमें सरकारी स्कूलों में पठन-पाठन का समुचित माहौल न होने के चित्र अंकित हैं। पिछले जून माह में पूर्व माध्यमिक विद्यालय, गोठा, जिला बदायूँ (उत्तर प्रदेश) जाना हुआ। चारदीवारी न होने के बावजूद एक सरकारी विद्यालय का पेड़-पौधों

* *सह-समन्वयक*, हिंदी भाषा, बी.आर.सी., नरैनी, बाँदा, उत्तर प्रदेश

से हरा-भरा परिवेश, आकर्षक भवन, कंप्यूटर एवं 'मीना' कक्ष, प्रार्थना स्थल एवं व्यवस्थित प्रयोगशाला देखकर मन प्रफुल्लित हुआ और सुखद आश्चर्य भी क्योंकि ऐसा परिवेश तो किसी निजी स्कूल में भी दिखायी नहीं देता। सरकारी स्कूलों का भौतिक परिवेश प्रायः ऐसा देखने को नहीं मिलता। यह परिवर्तन कैसे हुआ इस संबंध में वहाँ कार्यरत विज्ञान शिक्षक मनोज वार्ष्णेय सेनानी से बातचीत की। उनकी बातों में उनका बच्चों के प्रति समर्पण और अपनेपन की झलक तो मिली ही साथ ही उनके ध्येय प्राप्ति की स्पष्ट कार्ययोजना एवं क्रियान्वयन तथा सामंजस्यपूर्ण व्यवहार का दर्शन भी हुआ। यह कहानी वास्तव में एक शिक्षक की जीवंतता और अदम्य उत्साह की प्रेरक कथा है, जो कर्मपथ पर बढ़ने वालों को सदा सम्बल प्रदान करेगी। मनोज वार्ष्णेप धीरे-धीरे कहना शुरू करते हैं, "मैं प्राथमिक विद्यालय सिरसावाँ से विज्ञान शिक्षक के रूप में पदोन्नत होकर जुलाई 2013 में पूर्व माध्यमिक विद्यालय, गोठा में आया। तब कुल विद्यार्थी नामांकन 61 थी, जोकि गाँव की जनसंख्या और 11–14 वय वर्ग के बच्चों की संख्या के अनुपात में बहुत कम थी, क्योंकि गाँव के अधिकांश बच्चे वजीरगंज स्थित निजी विद्यालयों में पढ़ने जाते थे। मेरे आने के पूर्व विद्यालय में केवल एक शिक्षक नेत्रपाल सिंह चौहान ही प्रधान अध्यापक के रूप में काम देख रहे थे, लेकिन वह विद्यालय की दयनीय स्थिति को लेकर चिंतित थे और बदलाव चाहते थे पर अकेले होने के कारण उनके लिए कुछ कर पाना संभव नहीं हो पा रहा था। अनाकर्षक विद्यालय भवन बच्चों को मुँह चिढ़ाता जैसे अपने से दूर धकेल रहा था। न कोई चारदीवारी न व्यवस्थित शौचालय और न ही प्रयोगशाला-पुस्तकालय। धूल उड़ते परिसर में 'पाकर' के दो वृक्ष मौन होकर मानो सब देख रहे थे। मेरे आने से प्रधान अध्यापक जी को बल मिला। विद्यालय में क्या ज़रूरतें हैं और उपलब्ध संसाधन कितने हैं, को चिह्नित किया गया। समस्याओं की पहचान कर समाधान के रास्ते तलाशे गए कि कौन-सी समस्याएँ विद्यालय स्तर पर अपने प्रयासों और सामुदायिक सहयोग से हल की जा सकती हैं और किनके लिए हमें विभाग की मदद की ज़रूरत होगी। इस प्रकार हम दोनों ने योजना बनाकर काम करना आरंभ किया।"

तो दोनों शिक्षकों ने हाथ में पहला काम लिया विद्यार्थियों की संख्या बढाने का। इसके लिए उन्होंने *डोर टू डोर* संपर्क करने का निश्चय किया और विद्यालय समय के बाद अभिभावकों से मिलने-जुलने निकल जाते। लोगों ने वादा तो किया, लेकिन विद्यालय में बच्चों के नाम नहीं लिखवाए। पूरा परिश्रम पानी में बहने को था। मनोज उन दिनों को याद करते हुए बताते हैं, "मेरे दिमाग में तूफान मचा हुआ था। मैं कारण जानना चाह रहा था कि आखिर क्यों अभिभावक अपने बच्चों का नामांकन नहीं करवा रहे हैं। बहुत कोशिश करने के बाद भी विद्यालय का नामांकन 71 तक जा सका। मैं उन कारणों की तह तक जाना चाहता था। बस फिर, एक दिन जैसे बिजली चमकी, पथ का अंधकार छँटा और मुझे मेरा रास्ता बिल्कुल साफ़-साफ़ दिखाई देने लगा। मैंने निर्णय लिया कि अब अभिभावक संपर्क का यह औपचारिक तरीका बदलना होगा। मैं विद्यालय समय से एक घंटे पहले आऊँगा और एक घंटे बाद जाऊँगा और गाँव

के लोगों से खुलकर बातचीत करूँगा। स्वाभाविक था कि यह समय मैं अपने परिवार के हिस्से से काटने वाला था तो मैंने अपनी पत्नी श्रीमती रीना सेनानी से बात करना उचित समझा। मैं थोड़ा असहज और डरा हुआ था कि पता नहीं उनकी क्या प्रतिक्रिया हो, पर उनके सकारात्मक उत्तर ने मुझे ऊर्जा और मजबूती प्रदान कर दी।"

इस प्रकार वह घर से जल्दी निकलते। उस समय उनकी दो माह की बेटी आरोही सो रही होती। गाँव पहुँचकर बच्चों की सूची अनुसार उनके परिवार से मिलना, उनके खेत-खलिहान, काम-धंधे, फ़सल-उपज एवं स्वास्थ्य की बातें करते हुए बच्चों के नाम स्कूल में न लिखवाने के कारण जानने की कोशिश करना और एक डायरी में पूरा ब्योरा दर्ज़ करना उनकी दिनचर्या बन गई थी। हालाँकि शुरुआत में गाँव वालों ने कोई तवज्ज़ो नहीं दिया और शिक्षक के इस प्रयास को मज़बूरी में किया जा रहा केवल सरकारी काम समझते रहे। वह गाँव के सुख-दुख में भी सहभागी होने लगे। धीरे-धीरे गाँव के लोगों का मन मिलने लगा। पहले जो माता-पिता अनदेखी कर रहे थे और औपचारिक उत्तर, "अरे सर! अब आप आए हैं तो बच्चे को स्कूल भेजेंगे ही।" देते थे, वे अब सहजता से बात करते और विद्यालय की कमियों की ओर संकेत करते। इस प्रक्रिया में बड़ी बात निकली कि विद्यालय से गाँव का विश्वास टूट गया है, क्योंकि यहाँ पढ़ाई नहीं होती और यहाँ बच्चे भेजने का मतलब है बच्चों के भविष्य के साथ खिलवाड़ करना। बच्चों को गाँव से पाँच कि.मी. दूर वजीरगंज भेजना और ज़्यादा धन खर्च करना अच्छा नहीं लगता पर विवशता है, आखिर बच्चों के भविष्य निर्माण का सवाल जो ठहरा। सत्र आधा बीत चुका था। अब नए प्रवेश की संभावना बिल्कुल न थी, लेकिन वह अपने काम में डटे रहे क्योंकि उनकी दृष्टि अगले सत्र पर थी।

स्कूल के प्रति समुदाय में विश्वास कैसे बहाल हो? यह प्रश्न शिक्षकों को परेशान कर रहा था। सरकारी स्कूलों में पढ़ाई नहीं होती, इस जनछवि को तोड़ना बड़ी और एकमात्र चुनौती थी। विद्यालय की पहचान और सफलता का पथ यहीं से निकलना था और इसका एक ही रास्ता था कि शिक्षण प्रभावी हो। मेरे यह पूछने पर कि इन चुनौतियों का सामना कैसे किया और किस कार्ययोजना से आगे बढ़े? मनोज वार्ष्णेय बताते हुए कहीं अतीत में खो जाते हैं, "प्रधान अध्यापक जी ने सहयोग का पूरा भरोसा देते हुए विद्यालय की बागडोर मुझे सौंप दी थी। मुझे दो मोर्चों पर लड़ना था। पहला, विद्यालय में प्रभावी शिक्षण एवं शिक्षणेत्तर गतिविधियों के सम्यक संचालन के साथ तो दूसरे, समुदाय का विश्वास अर्जित करने के लिए। तब यह ज़रूरी हो गया कि मैं समझूँ कि बच्चों के लिए विद्यालय के मायने क्या हैं? तब मैं जान पाया कि विद्यालय बच्चों के लिए डर, भय, कुंठा का केंद्र और कैदखाना नहीं बल्कि आनंद की जगह होनी चाहिए, जहाँ उन्हें उनके मन की करने की आज़ादी और जगह मिल सके। इसके लिए मुझे बच्चों का मीत बनना होगा। समुदाय का विद्यालय के प्रति अपनेपन का भाव जागेगा तो विद्यालय सुरक्षित और विकसित होगा। इसके लिए प्रार्थना सत्र में केवल प्रार्थना न करके सभी बच्चों के साथ कुछ गतिविधियाँ की जाने लगीं जिसमें योग, सामान्य ज्ञान, प्रेरक प्रसंग,

समाचार पत्रों की हेडलाइन्स का वाचन और बच्चों की राय लेने जैसे काम होते थे। अभिभावकों को भी बुलाना-सलाह लेना शुरू किया। मीना मंच का गठन कर विद्यालय न आने वाली बालिकाओं को नियमित विद्यालय आने हेतु प्रेरित किया। साथ ही गाँव में महिलाओं एवं किशोरियों के स्वास्थ्य एवं अन्य समस्याओं के लिए नुक्कड़ नाटक, मुखौटा नृत्य से रचनात्मक माहौल बनाने में मदद मिली। परिणामतः बालिकाएँ नियमित विद्यालय आने लगीं। बच्चों में सेवाभाव, अनुशासन, आत्मविश्वास एवं सामाजिक सद्भाव जागरण के लिए स्काउट-गाइड की स्थापना की और क्षेत्रीय मेलों में कैंप एवं प्याऊ लगवाए। स्वच्छता अभियान को भी गति दी। नामांकन के सापेक्ष शत-प्रतिशत या अधिकतम उपस्थिति के लिए *स्टार ऑफ़ द मंथ* नामक कार्यक्रम प्रारंभ किया और कक्षावार सर्वाधिक उपस्थिति वाले बच्चों को सम्मानित करना प्रारंभ किया। साथ ही अधिकतम अंक लाने वाले बच्चों को भी पुरस्कृत करना प्रारंभ किया। इससे बच्चों में एक स्वस्थ प्रतिस्पर्धा का भाव उदय हुआ और विद्यालय बच्चों के कलरव से गुंजित होने लगा जो सुख दे रहा था। पूरे वर्ष भर नब्बे प्रतिशत से अधिक उपस्थिति वाले बच्चों की माताओं को एक समारोह में सम्मानित करने हेतु 'मातृ दिवस' नाम से योजना बनाकर माताओं को सम्मानित करने से महिलाओं का विद्यालय के प्रति जुड़ाव हुआ है। पिछले चार वर्षों से विद्यालय मातृ दिवस मनाता आ रहा है। परिसर में दो 'पाकर' के पेड़ों को छोड़कर कोई पेड़-पौधे नहीं थे। खाली पड़ी ज़मीन पर विभिन्न प्रकार के फूलों के पौधे और कुछ शोभाकारी पेड़ रोपने का निश्चय किया। लेकिन विद्यालय में चारदीवारी न होने के कारण पौधों के नष्ट हो जाने की आशंका थी। इसके लिए विद्यालय में पृथ्वी ईको क्लब बनाया और बच्चों को उससे जोड़ा। मानव जीवन में पर्यावरण के महत्व पर परस्पर बातचीत की। पेड़-पौधों की सुरक्षा की ज़िम्मेदारी बच्चों ने स्वेच्छा से सँभाल ली। आज पूरा विद्यालय परिसर हरा भरा है। गाँव के लोग भी जुड़ गए। इन सब कामों से विद्यालय बदलने लगा और विद्यालय के प्रति गाँव वालों की सोच भी। विद्यालय की गतिविधियाँ समुदाय के बीच चर्चा का विषय तो बनी ही साथ ही विभाग के अधिकारियों का भी ध्यान आकर्षित किया और वे विद्यालय आने एवं उनका उत्साह बढ़ाने लगे। श्रम को सत्कार मिला तो नई ऊर्जा मिली। प्रबंध समिति ने विभाग से एक शिक्षक देने की माँग की। विद्यालय के सहयोग के लिए हाथ बढ़ने लगे। बच्चे खुश थे और उनमें विद्यालय आने की ललक हिलोरें लेने लगी। विद्यालय समय बाद भी बच्चे रुकना चाह रहे थे। विद्यालय आनंद घर बनने की ओर एक-एक कदम बढ़ रहा था।

नया सत्र दस्तक दे चुका था और गत वर्ष विद्यालय के अंदर एवं समुदाय के साथ की गई मेहनत का फल दिखने लगा। अभिभावक बच्चों का नाम लिखवाने समूह में आ रहे थे और नामांकन गतवर्ष के 71 के सापेक्ष 110 हो गया था। बच्चे विभिन्न कक्षाओं में प्रवेश ले रहे थे। इनमें अधिकांश बच्चे वज़ीरगंज के निजी स्कूलों से टीसी लेकर आए थे। अध्यापक खुश थे, होना भी चाहिए था क्योंकि यह एक सरकारी विद्यालय पर समुदाय की विश्वास बहाली का उत्सव था। विद्यालय समुदाय के साथ

विकास पथ पर अग्रसर था और तभी सितंबर 2015 में श्रीमती सुधा ने गणित शिक्षक के रूप में कार्यभार ग्रहण किया। तो दो से भले तीन, तीन कक्षाओं के लिए तीन शिक्षक हो गए और विद्यालय विकास की राह में तीव्र गति के साथ बढ़ चला। शिक्षण को प्रभावी बनाने के लिए ज़रूरी था कि बच्चे गणित, विज्ञान, कृषि एवं पर्यावरण विषयान्तर्गत पाठों के प्रयोगों को स्वयं करके देखें, अनुभव करें और अपना ज्ञान निर्माण करें। लेकिन विद्यालय में पुरानी विज्ञान और गणित किट के सिवा कुछ भी न था और वह भी प्रयोग लायक न थी। तो शिक्षकों ने निजी प्रयासों से एवं समुदाय से आर्थिक सहयोग लेकर व्यवस्थित प्रयोगशाला विकसित की जिसका उद्घाटन एस.डी.एम. बिसौली, श्री गुलाब चन्द्र जी ने राष्ट्रीय विज्ञान दिवस 28 फ़रवरी 2015 को किया। प्रयोगशाला में बच्चे विभिन्न उपकरणों की बनावट एवं कार्यविधि को समझते हैं, नए-नए प्रयोग करके अपनी समझ बनाते हैं। गतवर्ष विद्यालय के छात्र शिवम साहू (कक्षा 6) ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी परिषद् द्वारा दिसंबर 2016 में बारामती, महाराष्ट्र में आयोजित राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस में सहभाग कर अपना शोध प्रस्तुत कर विद्यालय की पहचान में चार चाँद लगाए। भौतिक वातावरण की बेहतरी के लिए गाँव और अपने संपर्कित लोगों से सहयोग लिया जो वस्तुओं के रूप में मिला। सबमर्सिबल पंप, बच्चों के लिए डायरी, टाई एवं बेल्ट, दो कंप्यूटर, दो कंप्यूटर टेबल एवं कुर्सी, एक जेनरेटर, एक प्रोजेक्टर, 9 पंखे, साउंड सिस्टम, वॉटर फिल्टर, 36 पेटी टाईल्स, 22 ट्री गार्ड, डायस, एक स्टेबलाइजर 3 किलोवॉट, 3 बोर्ड, दो यू.पी.एस., गैस सिलेंडर एवं चूल्हा, 20 गमले, माँ सरस्वती की पीतल की प्रतिमा आदि समुदाय ने प्रदान किया है। सत्र 2015–16 में दो छात्राओं शुभांगिनी एव शिल्पी चौहान ने राज्य स्तर पर विज्ञान प्रदर्शनी में प्रतिभाग किया। कई छात्रों ने स्काउट की राज्य स्तरीय परीक्षा उत्तीर्ण की और कई छात्र तृतीय सोपान का प्रशिक्षण प्राप्त कर चुके हैं। विद्यालय की स्काउट टीम ने मंडल स्तर पर प्रतिभाग किया। ब्लॉक एवं जिला स्तरीय क्रीड़ा रैली में एकल एवं टीम वर्ग में विजेता होने का गौरव मिला है। विद्यालय में एक सक्रिय पुस्तकालय भी स्थापित है, जहाँ बच्चे पत्र-पत्रिकाएँ और पुस्तकें पढ़ते हैं। एक्सपोज़र विज़िट के माध्यम से बच्चे अपने ऐतिहासिक स्थलों, प्राचीन ईमारतों, कारखानों एवं सरकारी विभागों को करीब से देखते और परिवेश से जुड़ते हैं।" विद्यालय के शिक्षक मनोज वार्ष्णेय को मई 2016 में मुख्यमंत्री द्वारा राज्य स्तरीय नवाचारी शिक्षक सम्मान प्राप्त हुआ। विद्यालय का चयन प्रधानमंत्री 'विद्यांजलि योजना' में हुआ। जिले में क्रियान्वित 'मुस्कान योजना' में विद्यालय ने अपनी खास पहचान बनाई है और जिले के प्रथम 10 स्वच्छ विद्यालयों में चयनित हुआ है। आज विद्यालय का छात्रांकन 138 है। विद्यालय में कक्षाओं को रेड, ब्लयू और ग्रीन हाउस में बाँटा गया है। सरकारी यूनीफ़ॉर्म के अलावा अभिभावकों ने हाउस अनुसार केसरिया, सफेद और हरे रंग की यूनीफ़ॉर्म बनवाई है।

इस रूपांतरित विद्यालय के कण-कण, तृण-तृण में श्रम एवं सहकार की उपासना-साधना के सिद्ध मंत्र का स्वर मुखरित हो रहा है। यहाँ का परिवेश शिक्षक एवं समुदाय के समन्वय से उपजी सुवासित प्रेरक गाथा बाँच रहा है। खिलते पुष्पों की महकती क्यारियाँ

हँसते-चहकते बच्चों के प्रतिबिम्ब को फलक पर मानो टाँक रही हैं। यह एक विद्यालय के बदलाव की सफल कहानी भर नहीं है, बल्कि मन की संकल्प शक्ति का स्वर्णिम दिव्य दर्शन ही है, जिसे आत्मसात कर कोई भी व्यक्ति काल चक्र के माथे पर अपने हस्ताक्षर कर सकता है, जो अनुकरणीय है और श्लाघनीय भी।

"साहित्य भी बच्चों की रचनाशीलता को बढ़ा सकता है। कोई कहानी, कविता या गीत सुनकर बच्चे भी स्वयं कुछ लिखने की दिशा में प्रवृत्त हो सकते हैं। उनको इसके लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए कि वे अलग-अलग रचनात्मक अभिव्यक्ति के माध्यमों को आपस में मिलाएँ।"

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा — 2005